thearyasamaj.org

संस्थापित १८६७ ई.

आर्य मित्र

साप्ताहिक

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश का मुख पत्र

आजीवन शुल्क ₹ १०००
वार्षिक शुल्क ₹ १००
(विदेश ५० डालर वार्षिक) एक प्रति ₹ २.००

● वर्ष : ११६ ● अंक : ४२ ● ११ नवम्बर, २०१४ मार्ग शीर्ष कृ० पंचमी सम्वत् २०७१ ● दयानन्दाब्द १६० वेद व मानव सृष्टि सम्वत् : १६६०८५३११५

युवा पीढ़ी भारत की अस्मिता की रक्षार्थ आगे बढ़े और अपना दायित्व निभा कर राष्ट्र को टूटने से बचाये

-देवेन्द्रपाल वर्मा

आर्य प्रतिनिधि सभा उ.प्र. के प्रधान श्री देवेन्द्रपाल वर्मा ने प्रदेश के आर्य युवाओं के नाम प्रेषित एक सन्देश में कहा है कि आज बड़े ही जोर शोर से विदेशी संस्कृति व सभ्यता का प्रसार हमारे देश में हो रहा है-जिसमें हमारी एकता खण्डित हो रही है बड़े छोटे का लिहाज ही खत्म होता जा रहा है। 'खाओ पियो मौज उड़ाओ' का प्रचार जगह जगह अंग्रेजी में लगे विज्ञापन बोर्डों में पढ़ने को मिल रहा है। यह देश की अस्मिता की रक्षा का नहीं देश के तोड़ने का विदेशी षड़यंत्र है।

सबसे प्राचीन वैदिक संस्कृति जो आदि सृष्टि से चली आ रही है जिसका निर्माण वेदानुकूल किया गया है वह सारे विश्व को जोड़ने की संस्कृति है। एक-एक ईंट के जोड़ने से महल खड़ा होता है तो एक-एक हटाने से महत्व ढह जाता है। आज युवा पीढ़ी विदेशी संस्कृति की ओर जहां लुभावने सपने दिखाये जा रहे हैं, उसी की ओर बढ़ रही है। आज हमारे बुजुर्ग उपेक्षित हो रहे हैं बहुत से तो दाने दाने के लिए तरसने के लिए विवश हो रहे हैं। बच्चों के निर्माण में भी माता-पिता अपना दायित्व नहीं निभा रहे। कीमती स्कूलों में उनका प्रवेश कराना ही अपना धर्म मान कर चल रहे हैं। स्कूल भी धनार्जन के अड्डे बन रहे हैं विद्यार्थी के निर्माण के मन्दिर नहीं। फलतः आज देश विघटन की कगार पर है हम निराशा के माहौल में ही जीवन जी रहे हैं।

समाज निर्माण के लिए बच्चों को सही जीवन शैली देने के लिए विद्यालयों की व्यवस्था गुरूकुलों के रूप में की गयी थी जहां हमारे माता-पिता अपने बालक बालिकाओं को विद्यार्जन द्वारा जीवन निर्माण पाठ पढ़ाने के लिए गुरूजनों को सौंप देते थे फिर बच्चे अपने गुरूओं के अनुशासन में रहकर अपना पूर्ण अनुशासित जीवन बनाते थे। गुरूकुलों में गरीब अमीर सभी बच्चे एक साथ रहते पलते व पढ़ते थे फलतः सबमें एकत्व का भाव बुनियादी होता था। अंग्रेजों ने हमारे देश पर धूर्तता से व्यापारी बन कर अपना कब्जा जमाया और हमेशा हमें पराधीन रखने के लिए शिक्षा व्यवस्था ही बदल डाली। लार्ड मैकाले ने ऐसी शिक्षा बनायी कि उसे पढ़कर युवक रोजी रोटी और मकान में ही उलझा रहे।

सौभाग्य से अंग्रेजों की पराधीनता काल में ही महर्षि दयानन्द का आगमन हुआ जिन्होंने पराधीनता के मूल में नारी उत्पीड़न, छुआ-छूत जाति-पांति का भेद ढोंग पाखण्ड को पाया और उसके मूल में भी विदेशी शिक्षा व्यवस्था को पाया अतः उन्होंने सभी प्रकार के दुरितों से मिटाकर सुखी समृद्ध बनाने का मार्गदर्शन देने के लिए आर्य समाज की स्थापना की उसे आन्दोलन नाम दिया और कहा कि वेदों की ओर लौटो वेद ज्ञान ही हमें सच्चा इन्सान बना सकता है लड़के-लड़कियों के लिए गुरूकुलों विद्यालयों की स्थापना पर बल दिया जिसमें पढ़कर राम-लक्ष्मण, भरत शत्रुघ्न सदृश भाई उत्पन्न हों। तो योगेश्वर कृष्ण सदृश नीति कुशल राजे तैयार हों ताकि कभी भी धर्म परास्त न हो। अधर्म का नाश और कर्म की ही विजय हो। विदेशियों की पराधीनता की बेड़ियों से तो हम मुक्त हो गये परन्तु अपने ही नेताओं की अदूरदर्शिता से लार्ड मैकाले की शिक्षा व्यवस्था में ही रम गये। फलतः आज डिग्रीधारी युवक बहुत है परन्तु श्रेष्ठ नागरिक बनने की विधा क्षीण सी है। युवापीढ़ी उसी ओर बहक रही है। युवा राम, युवा कृष्ण, युवा दयानन्द, युवा श्रद्धानन्द, युवा भगत सिंह, युवा चन्द्रशेखर आजाद, युवा सरदार पटेल, युवा सुभाष चन्द्र बोस आदि एक नहीं अनेक राष्ट्र को विदेशियों के पंजे से छुड़ाने के लिए कटिबद्ध हुये थे और अन्ततः देश स्वतंत्र हुआ था। युवा पीढ़ी ही जब क्रान्ति का विगुल बजायेगी तभी विदेशी पराधीन मानसिकता की शिक्षा लार्ड मैकाले की शिक्षा व्यवस्था को हटाया जा सकेगा और प्राचीन वैदिक शिक्षा व्यवस्था का स्थापन हो सकेगा। जिस शिक्षा में सम्पूर्ण उन्नति का विज्ञान निहित है।

युवा वर्ग ही देश की दुरवस्था पर गम्भीर चिन्तन कर सकता है-अतः सम्पूर्ण युवा पीढ़ी सजग व सचेत होकर राष्ट्र को टूटने से बचाने, भारतीय संस्कृति को विनाश के गर्त से निकालने के लिए कृत संकल्प हो, और आर्य समाज आन्दोलन को तीव्र गति से चलाने का व्रत लें।

निश्चय ही युवापीढ़ी जब सजग व सचेत हो जायेगी और राष्ट्र के एकत्व व संवर्धन को कृत संकल्प हो जायेगी तो कोई ताकत उन्हें रोक न सकेगी वे अपने लक्ष्य में सफल होंगे हमारा राष्ट्र पूरी तरह से सुख समृद्धि से पूर्ण हो सारे विश्व का मार्ग दर्शक बनेगा महर्षि दयानन्द का कृण्वन्तो विश्वमार्यम् का स्वप्न साकार होगा।

●●●

वेदामृतम्

ओ३म् हंन्ताहं पृथिवी मिमां नि दधानीह वेहिवा।
कुवित्सोमस्यपामितिः ।। ऋग् १०.११६.६३

अर्थ– (हस्त) ओ (अहम्) मैं (इमाम्) इससे (पृथिवीम्) पार्थिव शरीर को (इहवा) यहां इस लोक में या इस योग भूमि में (इहवा) अथवा मोक्ष परलोक में (विदधानि) रखूँ क्योंकि मैंने (सोमस्य) परमात्मा के आनन्द रस का कुवित् (अथामिति) बहुत पान किया है।

भावार्थ– मैने जो ईश्वर की उपासना की है उससे मुझे विवेक ज्ञान हो गया है मैंने यह जान लिया है अज्ञान के कारण द्रष्टा आत्मा दर्शन अर्थात् बुद्धि से घटित दृष्यों को अपने में जान सुखी दुखी हो रहा है। अब मेरा इनसे कोई लेना देना नहीं मैं अपने स्वरूप में स्थित हुआ ज्ञान स्वरूप परमेश्वर के आनन्द में सराबोर हो गया हूँ यह शरीर रहे या न रहे इसकी मुझे चिन्ता नहीं।

- डॉ. स्वामी देवव्रत सरस्वती

विद्वान लेखकों से विनम्र अनुरोध

श्रद्धानन्द बलिदान दिवस पर आर्यमित्र साप्ताहिक का विशेषांक निकालने की योजना है। अतः विद्वान लेखकों से अनुरोध है कि वे अपने लेख व गीत हमें अविलम्ब भेजने की कृपा करें।

सम्पादक
आर्यमित्र साप्ताहिक
5, मीराबाई मार्ग, लखनऊ

देवेन्द्रपाल वर्मा
प्रधान/संरक्षक

स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती
मंत्री/प्रधान सम्पादक

आचार्य वेदव्रत अवस्थी
सम्पादक

thearyasamaj.org

सम्पादकीय.....

देश की रक्षा हमारी संगठन शक्ति से ही होगी।

जब से हमारा देश स्वतंत्र हुआ है तभी से विघटनकारी तत्व जो विदेशी शक्तियों के क्रीतदास है-हमारी अस्मिता को मिटाने में सतत संलग्न हैं। अंग्रेजों की फूट डालो और राजकरो की नीति से हमारे देश का विभाजन हुआ परन्तु वह कूटनीति हमारे देश के काले अंग्रेजों में समाहित होकर देश को तोड़ने के प्रयासों में जुटी हैं। इस सबका लाभ विदेशी शक्तियां हमारी सम्प्रभुता पर आक्रमण करके उठा रही है। पाकिस्तान और चीन दोनों देश हमारी प्रभुता को छीनने के प्रयास में पूरी तरह से संलग्न हैं। अभी वाघा सीमा पर धमाका और चीन के सैनिकों की जल व थल मार्ग से हमारे क्षेत्र में घुसने के प्रयास (जिन्हें हमारे जुझारू सैनिकों ने पूरी तरह से असफल कर दिया) इसके नवीनतम उदाहरण है।

हमारी राष्ट्रभक्त सेना विदेशी आक्रमणकारियों से देश की रक्षा करने में पूरी तरह से समर्थ-व-सक्रिय हैं। परन्तु अन्दर के भीतरघाती जयचन्दों से वह कैसे निपट पायेगी। यह एक प्रश्न है? हमारा देश सदियों गुलाम रहा पहले यवनों ने आक्रमण किया लूटा व हमें अपना गुलाम बनाया फिर व्यापारी बनकर कूटनीति कुशल अंग्रेजों ने हमें लूटा व हमें पराधीन बनाया। यवन जो हमारे देश में रह गये वह देश में पूरी तरह से घुल मिल गये आज हमारे देश का मुसलमान विदेशी नहीं भारतीय है उसके खून में भारतीय सरजमी का खून है और वह देश के लिए जीता है। हमारा स्वराज्य आन्दोलन इसका ज्वलन्त प्रमाण है कि उस आन्दोलन में कोई हिन्दू मुसलमान नहीं था सभी भारतीय थे और भारत को आजाद कराने में जी जान से जुटे थे परन्तु अंग्रेजों ने फूट डालो राज करो की नीति का जाते जाते भी प्रयोग करके मुहम्मद अली जिन्ना के माध्यम से-जो केवल जन्म से मुसलमान और धर्म से उनकी जीवन शैली पूरी अंग्रेजियत से सराबोर थी-देश का विभाजन करा दिया जिसका परिणाम पाकिस्तान से तमाम हिन्दू परिवार अपना सारा वैभव लुटाकर भारत में शरणार्थी बनकर आने को मजबूर हुये।

आजादी के बाद भारत का पहला संविधान बना जिसमें देश के प्रत्येक निवासी को भारत का नागरिक कहा गया और राष्ट्र को पन्थ निरपेक्ष घोषित किया गया। अंग्रेजी से पढ़कर तैयार नेताओं ने पन्थ और धर्म के मूल अर्थ को बिल्कुल नहीं समझा- देश को पन्थ व धर्म का भेद न जानने के कारण धर्म निरपेक्ष कहना प्रारम्भ किया। धर्म एक ही है शाश्वत है वह अपरिवर्तनीय है। धर्म का मोटे तौर पर अर्थ हमारा कर्तव्य है जबकि पन्थ का अर्थ पूजा पद्धति के विभिन्न प्रकार हैं। संविधान की भावना है किसी को किसी भी पूजा पद्धति पर चलने से नहीं रोका जा सकता। सभी अपनी अपनी पूजा पद्धति को अपनाने के लिए स्वतंत्र हैं।

प्रजातंत्र की सुदृढ़ता के लिए हमारे सम्विधान में जनतंत्रीय निर्वाचन पद्धति को स्वीकार किया गया। जिसमें देश के प्रत्येक बालिग नागरिक को अपनी पसन्द का नेता चुनने के लिए वोट देने का अधिकार दिया गया। धीरे- धीरे पद लोभ व प्राप्त पद की रक्षा के मोह ने (चूँकि वह पद अर्थ लाभ से जुड़े हैं) हमारे अन्दर फूट डालो और राज करो की नीति का प्रभाव डालना प्रारम्भ किया राजनेताओं ने हिन्दू-मुस्लिम की विभेदक भावना के सहारे वोट इकट्ठा करने की चेष्टा प्रारम्भ कर दी। इसमें राजनेताओं के साथ धार्मिक नेताओं ने भी इसे फैलाने में कोर कसर न रखी दोनों ही वर्ग जन जन में वह भेदक भावना भरने को व्यस्त हैं। अभी हाल में ही जामामस्जिद के शाही इमाम मौलाना अब्दुल्ला बुखारी (जो धर्म गुरू हैं) ने अपने पुत्र के नायब इमाम बनाने के उत्सव में भारत के प्रधान मंत्री को आमंत्रित न करने पर जब उनसे प्रश्न किया गया कि आपने अपने देश के प्रधान मंत्री को नहीं बुलाया जबकि पाकिस्तान के प्रधान मंत्री को बुलाया है ऐसा क्यों? तो उनका स्पष्ट उत्तर था कि पाकिस्तान के प्रधानमंत्री मेरे मित्र हैं। भारत के प्रधान मंत्री नरेन्द्र मोदी गुजरात दंगे में मुसलमानों को मारे जाने के अपराधी हैं-भले ही सुप्रीम कोर्ट ने उन्हें निर्दोष माना है परन्तु हम उन्हें निर्दोष नहीं दोषी ही मानते हैं। दूसरी ओर राजनीति में उत्तर प्रदेश के मंत्री श्री मोहम्मद आजम खाँ भी उन्हें गुजरात दंगों में मारे जाने वाले मुसलमानों का हत्यारा मानने की समय समय पर घोषणा करते हैं और हिन्दू-मुस्लिम में भेदभाव पैदा करा रहे हैं। तो दूसरी ओर राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के नेता हिन्दू जाति, हिन्दू संस्कृति का नारा देकर हिन्दू-मुस्लिम का घाव जाने अनजाने में बढ़ाते हैं। भारत का प्रत्येक निवासी भारतीय है न कोई हिन्दू है न कोई मुसलमान। भारत की संस्कृति भारतीय है जो सृष्टि आरम्भ से चली आ रही है वह संस्कृति अभेद्य है परन्तु हिन्दू संस्कृति कहकर (चूँकि हिन्दू शब्द मुसलमानी आक्रान्ता शासकों का हमारे लिए अपमानित करने के लिए गढ़ा गया था) अनजाने में ही सही देश में विघटनकारी तत्वों को बढ़ावा देने वाली है।

देश के सभी सुधी चिन्तकों, नागरिकों का यह गम्भीर दायित्व है कि वे अपने को पूरी तरह से भारतीय बनाकर भारत गण राज्य की पूर्ण संरक्षा के लिए अपना जीवन जियें। हिन्दू-मुस्लिम का भेद डालकर देश को तोड़ने वाली शक्तियों से सावधान रहकर देश की सीमाओं, देश की संस्कृति की रक्षार्थ मनसा वाचा कर्मसा एक हों और विश्व में भारत की एकता का प्रदर्शन करके देश को सर्वोच्च स्थान दिलाने में समर्थ बनें।

-सम्पादक

ईश्वर को समर्पित होते हैं जीवन के सभी क्रियाकलाप

-अनोखी लाल कोठारी

भारतीय जीवन दर्शन आध्यात्मिकता, धर्म परायणता और विश्व कल्याण की भावना से अनुप्राणित है। हमारे सभी नैमित्तिक क्रिया-कलापों में धर्म और आध्यात्मिकता को प्रमुखता दी गई है। इन सभी में उद्देश्य स्वार्थपरक नहीं बल्कि विश्व कल्याण के है। धर्म प्राणिमात्र के कल्याण की कामना करता हैं। हमारे खान-पान, रहन-सहन, व्रत-नियम, तप-साधना आदि सभी में धर्म और आध्यात्मिकता को आधारभूत महत्त्व दिया गया है। प्रातःकाल उठने से लेकर रात्रि में सोने तक हमारे सभी क्रियाकलाप ईश्वरपरक होते हैं। हर समय हम परमात्मा के प्रति नतमस्तक होकर कृतज्ञता व्यक्त करते हैं। हमारे सभी क्रियाकलाप ईश्वर को समर्पित होते हैं। नित्य शुद्ध, बुद्ध, परमात्मा के प्रति आस्था, श्रद्धा और विश्वास हमारी संस्कृति की चकाचौंध में ये पक्ष कुछ निर्बल हो रहे हैं। पहले हम उठते ही माता-पिता को नमन करते थे, प्रातः स्मरण करते थे। आज अखबारों में नायक-नायिका के चित्र देखते हैं, मरे लोगों को पहिचानने का प्रयत्न करते हैं। पहले हम प्रातः काल स्नान, पूजा-पाठ, स्वाध्याय तथा संध्यावन्दन करते थे लेकिन आज अखबार पढ़ना, दूरदर्शन के पर्दे पर खबरें देखना-सुनना, सीरियल देखना, फिल्म देखना, कुश्ती देखनी आदि मुख्य कार्य हैं। पहले भोजन के लिये घर में भगवान का महाप्रसाद बनाया जाता था। आज खाना पकाया जाता है और खाया जाता है। पहले ईश्वर के प्रति समर्पण का भाव था आज उपयोग करने की प्रवृत्ति है।

सामाजिक उत्सवों, सम्मेलनों आदि में भी हमारा व्यवहार भिन्न हो गया है। पहले ऐसे अवसरों पर लोग बड़े प्रेम से एक दूसरें से मिलते थे साथ में बैठकर प्रेम से भोजन करते थे। भोजन के लिये साथ बैठते, कोई मंत्र बोलते अथवा इष्टदेव का स्मरण करते और भोज्य-सामग्री को भगवान का प्रसाद मानकर ग्रहण करते तथा एक साथ ईश्वर का नाम लेकर उठते। आज बफे, डिनर का बोलबाला है। इसमें भी आवश्यक शालीनता का अभाव है। स्थान, साधन सामग्री के अनुपात में अधिक व्यक्तियों को आमंत्रित करते हैं तो सामग्री का छीना-झपटी, किसी वस्तु का कम हो जाना, पुरूष महिलाओं की अस्तव्यस्तता आदि बातें इस भोजन व्यवस्था के प्रति तिरस्कार की भावना पैदा कर देते हैं। इसलिये कोई-कोई व्यक्ति इस व्यवस्था को गिद्ध भोजन भी कहते हैं।

वेशभूषा के सम्बन्ध में भी कुछ बातों पर विचार करना अपेक्षित है। अंग्रेजों के जमाने में हमारे यहां के लोगों की वेशभूषा धोती कमीज, कोट और पगड़ी थी। कोई भी वयस्क व्यक्ति बिना पगड़ी पहने घर से बाहर नहीं निकलता था। आज पैंट-कमीज बुशर्ट, टी-शर्ट कोट, टाई आदि का रिवाज व्याप्त है। आज प्रायः सभी की पोषाक यही है। समय सुविधा और वैश्वीकरण के परिप्रेक्ष्य में इस पोषाक को मान्यता देना हमारी नियति है। अधिकांश युवाओं को धोती पहनना नहीं आता। विवाह त्यौहार आदि सांस्कृतिक अवसरों पर धोती पहनने, आदि में कई व्यक्ति शर्म महसूस करते हैं। संस्कृति शब्द 'परिस्कृत कार्य' अथवा उत्तम स्थिति का द्योतक है। जब हम किसी व्यक्ति अथवा वस्तु को संस्कारित करते हैं तो उसकी गुणवत्ता बढ़ती है। संस्कृति सौन्दर्य और उपयोगिता में वृद्धि करती है। इस बात को हम इस प्रकार समझें कि प्रकृति सौन्दर्य में संस्कार कर किसी वस्तु, विधि या स्थिति को परिष्कृत करना संस्कृति का कार्य है। उदाहरण के लिए वन प्रकृति है और उपवन संस्कृति है। परिष्करण का यह कार्य किसी देश या समुदाय के जीवन दर्शन के अनुरूप होता है और इसीलिये विश्व में भिन्न-भिन्न संस्कृतियां पाई जाती हैं।

thearyasamaj.org

वर्तमान शिक्षा पद्धति में गुरु-शिष्य की बदलती अवधारणा

-डॉ. विनोद बब्बर

महान् दार्शनिक, भारतीयता के पुजारी, पूर्व राष्ट्रपति, स्वर्गीय सर्वपल्ली डॉ. राधाकृष्णन जिनका जन्मदिवस 5 सितम्बर को सारे देश में 'शिक्षक दिवस' के रूप में मनाया जाता है, की मान्यता थी कि शिक्षा के द्वारा ही मानव मस्तिष्क का सदुपयोग संभव है। वे गर्व से कहा करते थे 'मैं पहले अध्यापक एवं फिर राष्ट्रपति हूँ'। आज जब शिक्षा की गुणात्मकता में नैतिकता का कोई स्थान न छोड़ने पर जोर है, गुरू-शिष्य संबंधों की पवित्रता को ग्रहण लग रहा है। ऐसे में डा. राधाकृष्णन का पुण्य स्मरण एक नई चेतना पैदा करता है।

इस बात से शायद ही कोई असहमत हो कि जीवन का सर्वाधिक आनंद भरा क्षण हमारा बचपन है, विशेषरूप से विद्यालय जीवन में बिताया हुआ हर क्षण अविस्मरणीय होता है। यही वह काल है जब हमारे भविष्य की इमारत की नींव की ईंटों को सुव्यवस्थित ढंग से रखा जा सकता है। भारतीय संस्कृति में गुरू का स्थान सदा से सर्वोपरि ही रहा है। बदलते परिवेश में गुरू का दायरा व्यापक होता गया। प्राचीन काल में शिष्य गुरू के आश्रम में रहकर ज्ञानार्जन करते और जीवन में शिक्षा एवं ज्ञानार्जन के साथ श्रम की महत्ता को समझकर युवा होकर गृहस्थ जीवन में प्रवेश करते थे। गुरू संदीपन के आश्रम में रहकर बाल कृष्ण योगिराज श्रीकृष्ण बने। गुरू विश्वामित्र के आश्रम में रहकर राजकुमार राम मर्यादा पुरूषोत्तम धनुर्धारी राम बने। आज 'शिक्षक' गुरू या आचार्य कहने का पर्यायवाची शब्द है। हम शिक्षक को राष्ट्र-निर्माता घोषित करते हैं क्योंकि हमारा विश्वास है कि वर्तमान के फिसलन भरे दौर में केवल शिक्षक ही अपनी सच्ची निष्ठा, योग्यता और क्षमता से देश के भविष्य का निर्माण करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। यदि एक शिक्षक संकल्पित हो तो अपने शिष्यों का सर्वांगीण विकास करते हुए अपने छात्रों में जीवन मूल्यों के संस्कार रोपित कर उन्हें राष्ट्रभक्त नागरिक बना सकता है। कभी-कभी ऐसा भी लगता है कि एक साधारण शिक्षक से हम बहुत अधिक आपेक्षाएं लगाये बैठे हैं। ऐसा करते हुए हम यह भूल भी जाते हैं कि वर्तमान शिक्षा पद्धति जहाँ एक ओर शिक्षक पर अनेक प्रतिबंध लगाती है वही दूसरी ओर छात्रों में राष्ट्र-प्रेम की भावना एवं मानव मूल्य उत्पन्न करने में असमर्थ है। उसका सर्व-धर्म सम्भाव से भी कोई लेना देना नहीं है, क्योंकि पाठयक्रमों का निर्माण मनमानें ढंग से किया गया। विदेशी शासकों के बाद भी हमारे अपनों ने हमें हीन भावना से ग्रसित रखने में अपने हित तलाशे। आज शिक्षा का प्रथम उद्देश्य बेहतर इंसान बनाना नहीं, कमाऊ पूत हो तो वहाँ इससे ज्यादा आशा की भी जाए तो कैसे ?

व्यावसायिकता के वर्तमान दौर में गुरू का वास्तविक अर्थ ही बदल गया है। सामाजिक, अध्यात्मिक मंच से लेकर शिक्षण संस्थाओं तक क्षेत्र में फैली आज अर्थ की प्रधानता ज्ञान से सर्वोपरि हो चली है। ज्ञान बांटने के नाम पर अधिक से अधिक अर्थ उपार्जन की उपजी मानसिकता ने गुरू के स्वरूप एवं कार्य को स्वार्थमंडित कर डाला है जिससे गुरू का वास्तविक स्वरूप ही बदला नजर आने लगा है। इसके बदलते विभिन्न स्वरूप एवं पड़ते प्रतिकूल प्रभाव को साफ-साफ देखा जा सकता है। क्या यह सत्य नहीं कि आज शिक्षक के जो दो रूप हमारे सामने है उनमें एक सरकारी कर्मचारी है जिसे पढ़ाने से ज्यादा दूसरे कार्यों में व्यस्त रखा जाता है। सरकारी स्कूलों में दाल-दलिया बांटने से वोट बनाने, जांचने, डलवाने गिनती करने से जनगणना और न जाने कौन-कौन से कार्यों से घोषित अघोषित कार्य जिसके जिम्मे हो उसे गुरू (शिक्षक) कहे भी तो कैसे ?

अब दूसरी श्रेणी में हैं सजे-धजे प्राइवेट स्कूलों में कार्यरत शिक्षक। वे किसी भी दृष्टि में गुरू नहीं कहे जा सकते क्योंकि महंगे निजी स्कूल गुरू-शिष्य परम्परा नहीं 'सर्विस प्रोवाइडर और क्लाइंट' के पोषक हैं। स्पष्ट है कि प्राचीन काल के गुरूकुल एवं वर्तमान के शिक्षण संस्थानों के परिवेश पर तुलनात्मक दृष्टिपात करने पर काफी अन्तर दिखाई देगा जबकि वास्तविक वैचारिक धरातल पर दोनों का मूल अर्थ एवं उद्देश्य एक ही रहा है। गुरूकुल में गुरू एवं शिष्यों के बीच जो संबंध स्थापित रहा है, वर्तमान के शिक्षण व्यवस्था में वह टूट-टूट कर चकनाचूर होता दिखाई दे रहा है। आज शिक्षण संस्थान व्यावसायिक संस्थान बनकर रह गये हैं, जहां ज्ञान अर्थ के साथ जुड़कर अर्थहीन हो चला है। इस परिवेश ने शिक्षकों की परिभाषा एवं स्वरूप को ही बदल दिया है। ऐसे में हम लाख गाते रहें - 'गुरू कुम्हार शिष्य कुंभ है' या 'सब धरती कागद करू.....गुरू गुण लिखा न जाय' पर सत्य यह है कि शिक्षा के मामले में हमने सर्वाधिक अनपढ़ता दिखाई है। पाठ्यक्रम बनाने से उसे लागू करने तक अनेक छेद है। सर्वाधिक आश्चर्यजनक है शिक्षा को नैतिक शिक्षा से रहित करना। जिन्हें 'साम्प्रदायिकता' की दुर्गन्ध से भी ज्यादा खतरनाक लगती हो वे शिक्षक का अर्थ जानते भी है या नहीं इस पर सवाल उठना चाहिए।

बेशक आज शिष्यों से दुर्व्यवहार, यौनशोषण अथवा शिष्यों द्वारा अध्यापकों के अपमान के किस्से चटखारे लेकर सुने-सुनाए जाते हैं। अध्यापक पर कक्षा की बजाय ट्यूशन में ही पढ़ाने के आरोप है लेकिन यह अर्धसत्य है, क्योंकि बहुसंख्यक अध्यापक आज भी अनवरत श्रम कर अपने शिष्यों के भविष्य को सुदृढ़ आधार देने में लगे हैं। बहुसंख्यक शिष्य भी अध्यापकों के प्रति सम्मान से भरे हैं।

हाँ, यह सत्य है कि जहाँ शिक्षा व्यापार बनेगी वहाँ नैतिक मूल्यों की तलाश निरर्थक है। आज हम अपने बच्चों को गली-गली खुले तथाकथित अंग्रेजी माध्यम उन स्कूलों के हवाले कर निश्चित हो जाते हैं, जहाँ गुडमार्निंग, मैडम, सदियों से गाई जा रही दो-चार अंग्रेजी 'पोइमस' रटाना या काउ, कैट, एप्पल, वन, टू, का पट्टा अपने बच्चे के गले में टांगें देख हम फूले नहीं समाते हैं। माफ करे, जो किसी अबोध बालक को उसकी मातृभाषा, उसकी मातृ संस्कृति से दूर ले जाए वह शिक्षा हो ही नहीं सकती। शिक्षा वह जो बंधनों से मुक्त करे या शिक्षा वह जो बंधनों में जकड़े, मासूम बच्चे के शारीरिक, मानसिक विकास में बाधक बने ?पर संकट यह है कि हमें अपने बच्चे को श्रेष्ठ मानव नहीं, 'मनी मेकिंग मशीन' बनाना है।

शिक्षक को सम्मान दिए बिना शिक्षा का कोई महत्व नहीं है। आज शिक्षक बनना किसी की प्राथमिकता नहीं है। डाक्टर इंजीनियर, सीए, सीएस, आईए एस सबका सपना है। जब कुछ न बन सके ता चलो टीचर ही बन जाए। स्पष्ट है मजबूरी में अध्यापक बनने वाला जीवन भर मजबूर ही रहेगा। उससे बहुत ज्यादा आशाएं भी करे तो क्या यह उससे अन्याय नहीं होगा। एक प्रसिद्ध कहावत है- 'टीचर्स शुड बी दि बेस्ट माइंड्स ऑफ दि कंट्री।' एक गलत अध्यापक का चयन सैकड़ों बच्चों के कैरियर को ध्वस्त कर सकता है। एक सच्चा अध्यापक उस दीये के समान है जो स्वयं जलकर संसार को रोशनी देता है। वह न सिर्फ अबोध बच्चों का हाथ थामता है, उसकी प्रतिभा भी निखारता है। वह शैक्षिक ही नहीं जीवन दोनों का पाठ भी पढ़ाता है।

अंत में अमेरिका के महान राष्ट्रपति इब्राहिम लिंकन द्वारा अपने बच्चे के अध्यापक को लिखे उस पत्र की चर्चा करना चाहूँगा जिसमें उन्होंने कहा था, 'तुम मेरे बच्चे के भविष्य-निर्माता ही नहीं भाग्य-विधायक भी हो। तुम्हीं उसे बता सकते हो कि हराम की कमाई में बरकत नहीं होती। तुम्हीं उसे स्वयं को एवं अन्यों को सम्मान देना सिखा सकते हो। तुम्हीं उसे बताओगे कि पसीना बहाकर कमाया गया एक डॉलर सड़क पर मिले सौ डॉलर से अधिक मूल्यवान होता है। तुम्हीं से वह सीखेगा कि सत्य की राह दुर्गम अवश्य है लेकिन अंततः वही कल्याणकारी है। जीवन की छोटी-छोटी सारगर्भित बातें तुम्हीं उसे समझाओगे।'

अमेरिका से दास प्रथा समाप्त करने वाले महान सामाजिक योद्धा इब्राहिम लिंकन को नमन कर जब पलटता हूँ तो उनका यह प्रसिद्ध पत्र आज दुनिया भर के अनेक विद्यालयों के प्रांगण में टंगा या रंगा दिखाई देता है पर ऐसे शिक्षक, अभिभावक ढूंढ़ने पर भी नहीं मिलते जो लिंकन से सहमत हों। यदि हम अपने बच्चे को आज नहीं सिखा सके तो कल बहुत देर हो चुकी होगी। प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक थोमस ऐ हैरिस अपनी बेस्ट सेलिंग बुक 'आई एम ओके यू आर ओके' में लिखते है - 'मनोजन्य रोगों का मूलाधार बच्चों की गलत शिक्षा एवं लर्निंग में ही है। मनुष्य के व्यक्तित्व का निर्धारण बारह वर्ष तक हो जाता है, बाद में तो वह मात्र टेप को रिप्ले करता है।

(वनौषधि माला से साभार)

thearyasamaj.org

आर्य-द्रविड परिवार की भाषाओं के काल्पनिक सिद्धांत पर पुनर्विचार

डॉ. परमानंद पांचाल

पाश्चात्य विद्वानों द्वारा निरंतर यह भ्रम फैलाने का प्रयत्न किया जाता रहा है कि आर्य भारत में बाहर से आक्रामक के रूप में आए और उन्होंने यहां के मूल निवासी द्रविड़ों को उत्तर से भगा दिया, जो आज दक्षिण में रह रहें हैं। इस मिथ्या प्रचार का दुष्परिणाम निकला-भारत का उत्तर और दक्षिण के रूप में आनुवांशिक आधार पर विभाजन और परस्पर जातीय वैमनस्य। ब्रिटिश साम्राज्य को अपनी जड़ें मज़बूत करने में इस सिद्धांत से अपेक्षित सहायता भी मिली। हमारे इतिहासकारों और भाषा वैज्ञानिकों ने शिक्षा के क्षेत्र में इसका प्रचार किया। परिणामतः उत्तर और दक्षिण के बीच जातीय आधार पर जो खाई उत्पन्न हुई, उसके घातक परिणाम सामाजिक और राजनैतिक क्षेत्र में भी देखने को मिले। सभी जानते है कि एक प्रांत का नाम तो मात्र जातीय आधार पर ही रखा गया। यही नहीं, एक दो राजनैतिक दलों का गठन भी द्रविड़ शब्द को आधार मानकर किया गया, जिसकी पृष्ठभूमि में स्पष्ट रूप से जातीय पृथकता की गंध आती है। यही नहीं, देखा जाए तो श्रीलंका के लम्बे जातीय संघर्ष के पीछे भी यही तत्व विद्यमान रहा है।

प्रसन्नता का विषय है कि हार्वर्ड विश्वविद्यालय और भारतीय शोधर्थियों के एक दल ने अपने एक नवीनतम अध्ययन के आधार पर अब यह मत प्रकट किया है कि आर्य और द्रविड़ विभाजन महज एक कल्पना है। इससे सदियों से चली आ रही यह मान्यता कि उत्तर भारतीय लोग आर्य है और दक्षिण भारतीय द्रविड़ जाति के है, एक कपोल कल्पना के अतिरिक्त कुछ नहीं है।

कोशिकीय तथा आणविक जीव विज्ञान केन्द्र (सेंटर फोर सेल्यूलर एण्ड मॉलिक्यूलर बायॉलाजी) अर्थात् सी.सी.एम.बी. ने इस अध्ययन को हार्वर्ड मेडिकल स्कूल, ऑफ पब्लिक हैल्थ ब्रॉड इंस्टिट्यूट ऑफ हार्वर्ड एम.आई.टी. के सहयोग से अंजाम दिया है।

इस अध्ययन के परिणामों ने इतिहास को एक नया मोड़ दे दिया। इसके अनुसार सभी भारतीय अनुवांशिक रूप से जुड़े हुए है। सभी भारतीय एक हैं। उत्तर और दक्षिण भारतीयों के पुरखों का जिनेटिव अंश एक है। सी.सी.एम.बी. के वरिष्ठ वैज्ञानिक के. तंगराज कहते है कि "आर्य द्रविड़ सिद्धांत" में जरा भी सच्चाई नहीं है।

यह सिद्धांत उत्तर भारतीय और दक्षिण भारतीयों के अपनी-अपनी जगह जम जाने के सैकड़ों वर्ष बाद आया। इतिहास की सच्चाई में एक नया मोड़ देने वाले इस अध्ययन के "को-ऑथर" और सी.सी.एम.बी. के पूर्व निदेशक श्री लालजी सिंह का कहना है कि यह शोध-पत्र इतिहास को नए सिरे से लिखेगा। इस अध्ययन के अनुसार 65,000 वर्ष पहले दक्षिण भारत और अंडमान में बस्तियां वजूद में आई और उसके 25,000 वर्ष बाद उत्तर भारत आबाद होने लगा। धीरे-धीरे उत्तर और दक्षिण भारतीयों का मिलना हुआ और एक मिश्रित पैदाइश ने आकार ले लिया। इस प्रकार दक्षिण और उत्तर भारतीय लोग आनुवांशिकी दृष्टि से परस्पर सम्बद्ध और एक है इससे पूर्व भी विद्वानों ने आर्य और द्रविड़ विभाजन के सिद्धांत का पूर्णतः खंडन किया हैं। सरस्वती नदी, जो 2,000 ई. पूर्व में सूख गई थी, के अवशेषों की खोज ने भी यह सिद्ध कर दिया है कि सरस्वती घाटी की सभ्यता हजारों वर्ष ई. पूर्व की एक विकसित सभ्यता थी। ऋग्वेद की ऋचाओं में सरस्वती नदी का बहुलता से गुणगान है, जो हिमालय से निकलकर अरब सागर में मिलती थी। वास्तव में सिधु और सरस्वती घाटी की सभ्यताएं इसके प्रमाण हैं कि हड़प्पा सभ्यता जो सिंधु से राजस्थान हरियाणा और उत्तर प्रदेश तक फैली थी, वह एक ही सभ्यता के विभिन्न रूप थे। अब सिंधु घाटी सभ्यता के चिह्न सुदूर केरल के एडक्कल की गुफाओं में भी पाए गए हैं जो 23,000 और 1,700 ई. पूर्व के हैं। यही नहीं कर्नाटक और तमिलनाडू में भी ऐसे अवशेष मिले हैं, जो सिंधु सभ्यता के अवशेषों से बिल्कुल मिलता-जुलता है। सिंधु लिपि के चिह्नों की यहां विद्यमानता सिद्ध करती हैं कि प्रागैतिहासिक काल में यहा समान सभ्यताएं विकसित थी। फिर आर्यों का बाहर से आने का सिद्धांत और आर्य द्रविड़ विभाजन पूर्णतः काल्पनिक और सोद्देश्य मात्र रह जाता है।

हार्वर्ड में हुए इस अध्ययन से स्वतः ही आर्य और द्रविड़ परिवार की भाषाओं का मिथक भी ध्वस्त हो जाता है। जब आर्य और द्रविड़ का विभाजन ही काल्पनिक है तो आर्य और द्रविड़ नाम के भाषाई परिवारों की कल्पना भी कपोल-कल्पित होने के सिवा कुछ नहीं है। आर्य और द्रविड़ परिवार की भाषाओं के सिद्धांत ने भारत में एक भाषाई वैमनस्य और उन्माद को जन्म दिया, जिसका लाभ साम्राज्यवादी शक्तियों ने उठाया और भारतीय अस्मिता को धूमिल करने में सहायता की। भारतीय भाषाओं के बीच जो दरार पैदा की गई उसका भरना आसान नहीं है। राष्ट्रीय एकता के लिए महात्मा गांधी और देश के अन्य अग्रणी नेताओं ने राष्ट्रभाषा के रूप में जिस भाषा की पहचान की थी, उसको सिरे ही नहीं चढ़ने दिया गया। उसके मार्ग में प्रमुख अवरोध का कारण भी यह सिद्धांत ही बना कि हिंदी आर्य परिवार की भाषा है। यही नहीं, आर्य और द्रविड़ परिवार के इस काल्पनिक विभाजन का विषवमन यहां तक हुआ कि भाषाई शुद्धता के नाम पर तमिल भाषा से संस्कृत के शब्दों कों चुन-चुनकर निकालने का प्रयास भी किया गया।

अगर मैं यह कहूं कि शुद्धता के नाम पर भारत की इस प्राचीन और समृद्ध भाषा तमिल के स्वाभाविक और प्रगामी प्रवाह को रोकने का भी एक कृत्रिम प्रयत्न किया गया, तो कोई अत्युक्ति न होगी, क्योंकि भाषा तो "बहता नीर" है।

जैसा कि पहले कहा गया है कि "आर्य" कोई जाति नहीं थी। "आर्य" और "द्रविड़" नाम से जातियों की कल्पना महज़ एक मिथक है। "आर्य" का अर्थ है- श्रेष्ठ, आदरणीय, योग्य आदि। (शिवराम वामन आप्टे कृत संस्कृत हिन्दी कोश, पृ0 156) ऋग्वेद का एक मंत्र है-"इंद्र वर्द्धतु अप्तुर, कृण्वंतो विश्वमार्यमम् अपध्नतो अराव्णः" अर्थात्-हम सज्जनों की वृद्धिं का प्रयास करें और विश्व को आर्य (श्रेष्ठ) बनाते चलें और दुष्टों का नाश करते चलें।

इसमें विश्व को आर्य (श्रेष्ठ) बनाने का आह्वान है, जाति को नहीं, क्योंकि किसी जाति (रेस) को कैसे बनाया जा सकता है?उसे तो श्रेष्ठ ही बनाया जा सकता है। स्पष्ट है कि आर्य कोई जाति नहीं थी और न वह भारत में बाहर से आई थी। आर्य को एक जाति (रेस) के रूप में स्थापित करने वाले एफ.आर. हर्नले ने कंपेरेटिव ग्रामर ऑफ गोडियन लैंग्वेज में यहां तक लिखा है कि भारत में आर्य कम से कम दो बार आए। इसी प्रकार कई भाषाविज्ञानियों और इतिहासकारों ने भी आर्यों को आक्रामक के रूप में बाहर से आने वाला बताया है। यह सत्य है कि भारतीयों का संबंध प्राचीन काल से ही मध्य एशिया और यूरोपीय देशों से रहा है। इसका अर्थ यह कदापि नहीं है कि यहां आर्य नाम से कोई जाति बाहर से आई थी। इसका कहीं भी कोई प्रमाण नहीं मिलता।

विशप रावर्ड कॉल्डवैल (1814-1841) ने त्रिनुरवेली में रहकर दि कंपरेटिव ग्रामर ऑफ द्रविडियन लैंग्वेजेज (1856) में ब्रिटिश साम्राज्यवाद की सुदृढ़ता के लिए अपना सिद्घांत रखा था, जो राजनैतिक, शैक्षिक और नवजागरणवाद () के उद्देश्यों पर आधारित था, जिसने 20वीं शती में द्रविड़ियन राष्ट्रवाद का प्रचार किया। इसने निश्चय ही भारत के राष्ट्रीय आंदोलन को धीमा करने में सहायता की। कॉल्डवैल तत्कालीन यूरोप के "वैज्ञानिक जातीय सिद्घांत" से प्रभावित था। इसलिए उसने "आर्य-द्रविड़ विभाजन" सिद्घांत को हवा दी। "द्रविड़ भाषाएं" नाम की उत्पत्ति उसी की देन है। चार्ल्स ई. गोवर तथा डी.पी. शिवराम (1871) ने कॉल्डवेल की मान्यताओं का प्रतिवाद किया और उन्हें निराधार बताया।

यहां मैं यह भी स्पष्ट कर दूँ कि देश को जातीय आधार पर विभाजित रखना ब्रिटिश राज के हित में था। ईस्ट इंडिया कंपनी के इतिहास को देखने से स्पष्ट हो जाता है कि जब कंपनी का चार्टर नवीनीकृत किया गया तो सर जॉन मेल्कम ने संसदीय समिति के सामने अपने बयान में कहा कि हमारे विस्तृत राज की सुरक्षा भारतीय जनता के जाति-भेद पर निर्भर करती है। जब तब वहां की मुख्य जातियाँ विभाजित रहेंगी, हमारी राजसत्ता और वर्ण व्यवस्था के विरूद्ध किसी विद्रोह की संभावना नहीं है।

यदि हम लिपि की दृष्टि से देखें तो भारत की प्रमुख भाषाओं की लिपियों का उद्गम एक ही लिपि ब्राह्मी लिपि रही है। कश्मीर से कन्याकुमारी तक की सभी भाषाओं की लिपियां ब्राह्मी की वंशज हैं। यदि जातीय आधार पर आर्य द्रविड़ परिवार की भाषाएं अलग हैं, तो द्रविड़ परिवार की भाषाओं की लिपियों का उद्गम भी कुछ अलग होना चाहिए था, जो नहीं है। वास्तविकता तो यह है कि ब्राह्मी और कालांतर में देवनागरी लिपि का प्रचलन भी सर्वप्रथम दक्षिण में ही हुआ था। भाषाविद् श्रीनिवास रिती की दृष्टि में अशोक-पूर्व ब्राह्मी ध्रुव दक्षिण में उत्पन्न हुई थी और आंध्र प्रदेश होते हुए उत्तर में गई। भट्टिपोलु लेख को वे अशोक काल के पूर्व के लेख का उदाहरण मानते है। (देखिए जर्नल ऑफ इपिग्राफिकल सोसाइटी ऑफ इंडिया, जिल्द 19,1993)। सौदराजन भारत में लेखन की कला को बहुत पूर्व की मानते हैं और ब्राह्मी के सूत्र को सिंधु घाटी की लिपि में देखते हैं। प्रारंभिक ब्राह्मी अभिलेख पांड्य प्रदेश की राजधानी मदुरा में प्रचुर संख्या में मिले हैं। अतः लिपि के आधार पर भी आर्य-द्रविड़ पृथकता का सिद्धांत खरा नहीं उतरता।

इस प्रकार हम देखते हैं कि साम्राज्यवाद के हित में ब्रिटिश इतिहासकारों और भाषावैज्ञानिकों ने देश को विभाजित रखने और यहां के लोगों को जातीय और भाषाई आधार पर बांटे रखने के लिए जो प्रयास किए थे, आज उन पर पुनर्विचार करने की परम आवश्यकता है।

आश्चर्य है कि हमारी शिक्षा संस्थाओं और भाषा विज्ञान की पाठ्य पुस्तकों में आज भी यही पढ़ाया जाता है। कि उत्तर की भाषाएं आर्य परिवार की भाषाएं है और दक्षिण की भाषाएं द्रविड़ परिवार की है। अब समय आ गया है। कि इस भ्रामक और काल्पनिक धारणा को तत्काल बदला जाए और उत्तर-दक्षिण के कृत्रिम भेदभाव को जो सत्यता पर आधारित नहीं है, सदा के लिए मिटा दिया जाए।

232-ए-पाकेट-1, मयूर विहार फेज-1, दिल्ली-110091

thearyasamaj.org

दीपावली पर्व और पर्यावरण

लेख बहुत विलम्ब से प्राप्त हुआ फिर भी पठनीय व स्वीकरणीय है इसी कारण प्रकाशित कर रहा हूँ-सम्पादक

-अर्जुनदेव चड्ढा

दीपावली पर्व का पर्यावरण के साथ घनिष्ठ सम्बंध है। इसका प्राचीन वैदिक नाम शारदीय नवसस्येष्टि है। शरद काल की नई फसल का त्यौहार। फसल मुख्य रूप से धान की। इस अन्न का उपभोग करने के पहले किसान उसकी यज्ञ में आहुति प्रदान करते थे। इसी कारण इसका नाम शारदीय नवसस्येष्टि है। दूसरा नाम दीपावली है। जिस प्रकार आश्विन मास की पूर्णिमा वर्ष की सर्वोत्कृष्ट चांदनी रात मानी जाती है उसी प्रकार कार्तिक मास की अमावस्या वर्ष की अंधेरी रातों में सबसे सघन अंधेरी रात मानी जाती है। इस गहन अंधकार वाली रात का पर्यावरण की दृष्टि से विशेष महत्व है।

वर्षा समाप्त हो चुकी है। किसान के घर नई फसल का अन्न आया है। वर्षाजल से गली-कूचों में नमी के कारण विभिन्न प्रकार के रोगों के कीटाणु उत्पन्न हो जाते हैं जिनका शमन अत्यावश्यक है। इसके लिए कार्तिक मास की अमावस्या की रात और उस रात के दिन का बड़ा महत्व है। दिन के समय नई फसल के अन्न का हवन सामग्री व घी से हवन करना एवं रात के समय दीपों की अवलियां बनाकर स्थान-स्थान पर सजाना। उन दीपों में घी व सरसों के तेल का प्रयोग करना। दिन के हवन से दिन का पर्यावरण शुद्ध और रात में दीपों की सजावट से विभिन्न प्रकार के रोगाणुओं का शमन। हुयी न पर्यावरण की रक्षा। इन दोनों का अन्योन्याश्रमय सम्बंध है। एक दूसरे के पूरक है। मानव का स्वास्थ्य शुद्ध पर्यावरण में ही सम्भव है। इसके प्रति हमारे प्राचीन ऋषि-मुनि बड़े सतर्क और जागरूक रहते थे। हम सभी जानते हैं कि पर्यावरण की रक्षा जनसहयोग से ही हो सकती है। दीपावली पर्व भी इसी भावना से जुड़ा हुआ है।

इस पर्व से पर्यावरण की रक्षा कैसे होती है?यह विचारणीय बिन्दू है। वास्तव में इस दिन प्रातःकाल घर-घर यज्ञ-हवन होता था। उससे वायु सुगंधित हो उठती थी। घी और हवन सामग्री की आहुतियों से पूरा पर्यावरण प्रभावित होता था क्योंकि उसके सूक्ष्म परमाणु वायु का संशोधन कर देते थे। घी में भेदक शक्ति होने के कारण वायु का प्रदूषण समाप्त हो जाता था। विशाल पैमाने पर यह क्रिया होने के कारण इसका प्रभाव दूर-सुदूर पड़ता था। इसे उत्सव का रूप दिया गया ताकि जनता-जनार्दन इसमें सोत्साह भाग लें। इसकी तैयारी बहुत पहले प्रारंभ हो जाती थी। लोग अपने घरों, गलियों, राहों, दुकानों सबकी सफाई करते थे। घरों की रंगाई-पुताई की जाती थी जिससे कि कूड़ा-कचरा साफ हो जाए और कीड़े-मकोड़े भी निकल जाएं। आज भी वैसा किया जाता है।

इस प्रकार हवन और सफाई के माध्यम से पर्यावरण संशोधित हो उठता था।

आज स्थितियां बदल गई हैं। सफाई तो जरूर की जाती है किन्तु उससे कई गुना अधिक पटाखों और आतिशबाजियों से वातावरण को अशुद्ध बना दिया जाता है। हवन यज्ञ तो बहुत कम घरों में होता है। थोड़ा बहुत होता है तो उसे पटाखे से पाट दिया जाता है। पटाखों से इतना ध्वनि प्रदूषण होता है जिसकी कल्पना नहीं कर सकते। प्रधानमंत्री के द्वारा ऐलान किया गया। स्वच्छ भारत अभियान एक सराहनीय कदम है-पर हम उस अभियान को कैसे सफल बना पाएंगे। जब खुशियों के नाम पर पटाखे और आतिशबाजियों से प्रदूषण उत्पन्न करेंगे। दीपावली का पटाखों के साथ दूर का भी संबंध नहीं है। एक बीमार व्यक्ति शय्या पर पड़ा हुआ है। वह कैसे उस प्रदूषण में जी पाएगा। छोटे-छोटे अबोध बच्चों के कानों में वह ध्वनि कितना कुप्रभाव डालती है। फेफड़ों में प्रदूषित वायु कितना कुप्रभाव डालती है- यह अनुभव सिद्ध बात है। किसको क्या समझाया जाए?सभी पढ़े-लिखे हैं और शुद्ध पर्यावरण में सुस्वास्थ्य सबको चाहिए।

पहले सरसों के तेल के दीपक व घृतदीप जलाए जाते थे। आज उनका स्थान मोमबत्तियों और बिजली के बल्वों ने ले लिया है। परम्परागत दीपक बहुत कम हो गए हैं। पर्यावरण की दृष्टि से मिट्टी के दीपों का महत्व अधिक है क्योंकि जब वे दीप जलते हैं तो गहन अंधेरी रात में उसके प्रकाश में रोग के कीटाणुओं का शमन हो जाता है। इस प्रकार वातावरण सुस्वास्थ्यप्रद बनता है। रात में जगमगाते दीपों की पंक्तियां स्वर्गिक दृश्य उपस्थित करती हैं। उसकी सुन्दरता पर मुग्ध होकर कवियों ने अपनी कल्पना के आधार पर अनेकशः काव्य सृजन किए हैं। उन्हें प्रतीक मानकर शिक्षाप्रद उपदेश दिए हैं। हमें इस पर्व की वैज्ञानिकता समझनी पड़ेगी, तभी हम इसका महत्व समझ पाएंगे।

आर्थिक दृष्टि से पटाखों पर जितना अपव्यय होता है उतना व्यय यदि सृजन और सौन्दर्यीकरण पर किया जाए तो शहर, नगर व ग्राम और सुन्दर बन जाएं और वातावरण को भी क्षति न पहुंचे। प्रतिवर्ष न जाने कितने बच्चे दुर्घटना के शिकार हो जाते हैं, कितने स्थानों पर आग भी लग जाती है। काश! इस पर्व को वैज्ञानिक ढंग से मनाया जाता तो पर्यावरण कितना स्वच्छ बनता। हमारे ऋषियों की परिकल्पना वातावरण की शुद्धता और स्वास्थ्य के आधार पर थी। हमें उसे जानना होगा।

आर्य समाज इस पर्व को ऋषि निर्वाण दिवस/दीपावली के रूप में मनाता है क्योंकि इसी दिन महर्षि दयानन्द सरस्वती को निर्वाण प्राप्त हुआ था। उन्होंने वेद ज्ञान के प्रचार में अपना जीवन आहूत कर दिया। इस महान पर्व के दिन हम उनके त्याग और कार्यों को यादकर महत्ती प्रेरणा ले सकते हैं। इस विज्ञान के युग में भी पाखंड और कुरीतियां हैं, अंधविश्वास है, भ्रांतियां हैं, रूढ़ियां हैं इन्हें दूर करने के लिए महर्षि दयानन्द के बताए सन्देश वेदों की ओर लौटो पर चिन्तन-मनन करना होगा। उनकी शिक्षाओं को आत्मसात करना होगा। आज मानव को मानव से ही भय है। न जाने वह कितने क्रूर कर्म कर रहा है जिसे पढ़-सुनकर हृदय दहल जाता है। ऋषि निर्वाण दिवस पर हमें व्रत लेना होगा कि हम उनके द्वारा जलाए गए वेद दीप को घर-घर में पहुंचाए। वेदों का पठन-पाठन हो। यज्ञ-हवन हो। मानव मानव बने। आसुरीवृत्तियों का संहार हो। सम्प्रति अर्थप्रधान युग में मानव ने सारे हथकंडे अर्थप्राप्ति में लगा दिए हैं। इसी कारण मानवता के मार्ग पर सन्नाटा पसरा है। सत्य को ग्रहण करने से व्यक्ति कतराता है। यह निर्वाण दिवस आपसे बहुत कुछ कह रहा है। बहुत कुछ अपेक्षाएं रखता है।

हम दीपावली के पर्व को सोत्साह मनाएं, क्योंकि यह ऋषियों का शोधपूर्व पर्व है। वैज्ञानिक पर्व है। पर्यावरण से जुड़ा हुआ पर्व है। ज्ञान के प्रकाश का पर्व है। इस दिन हम यज्ञ-हवन अवश्य करें। वेदों का अध्ययन करें। ऋषियों के ग्रंथों का स्वाध्याय करें। घर, गली, मुहल्ले, राह, बाग-बगीचे, दुकान, पार्क, मैदान सभी को स्वच्छ और दर्शनीय बनाएं। वायु की निर्मलता पर विशेष ध्यान दें। ध्वनि प्रदूषण न करें। रात्रि की निस्तब्धता तीव्र ध्वनियों से आहत होती है। रूग्ण शय्या पर पड़े हुए लोग, वृद्ध, बच्चों को तीव्र ध्वनियां असहनीय लगती है। आस-पड़ौस में मिष्ठान्न बांटिए। इससे प्रेमभाव बढ़ेगा। सामूहिक रूप से नए अन्न के साथ विशाल यज्ञ कीजिए, वातावरण शुद्ध बनेगा। सारे पर्व मानव को खुशियां और आनन्द देने के लिए हैं यह तभी संभव है, जब हम उन पर्वों को वैज्ञानिक ढंग से मनाएंगे। पर्यावरण को ध्यान में रखते हुए कार्य करेंगे। स्वच्छता करके उसकी सुन्दरता को हृदयंगम करेंगे। आज की स्थिति में यह महान संदेश है। मूक आह्वान है।

thearyasamaj.org

व्याकरण के सूर्य स्वामी विरजानन्द

पं. मनुदेव 'अभय'
विद्यावाचस्पति

यह सर्वविदित है कि नदी में भयंकर बाढ उतर जाने के पश्चात् नदी एकदम शान्त हो जाती है, किंतु अपने दोनों किनारों पर न जाने कहां कहां का कूड़ा करकट छोड़ जाती है। स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए मुख्य रूप से तीन बार प्रयास किए गए। प्रथम 1757 में बक्सर का युद्ध द्वितीय 1857 का महान क्रांतिपूर्ण युद्ध तथा सन् 1947 में अन्ततः विजय श्री प्राप्त होकर यह देश स्वतंत्र हुआ। पूर्वोक्त शब्दावली के अनुसार सन् 1857 का महान क्रांतिपूर्ण युद्ध कतिपय ज्ञात अज्ञात कारणों से असफल हो गया। तब इसके पश्चात सम्पूर्ण देश में एक मुर्दानगी छा गयी। पराजित जाति के लिए इससे बढ़कर लज्जापूर्ण और अन्य कोई कृत्य नहीं होगा। इस क्रांति के ठीक 12 वर्ष पश्चात देश के पश्चिमोत्तर प्रांत में भयंकर दुर्भिक्ष पड़ गया। देश के सभी भागों में इसकी छाया पड़ी और सहस्त्रों लोग कस्बों ग्रामों को छोड़कर शहरों की ओर आने लगे। इन पंक्तियों के लेखक के पितामह एवं पितामही इन पीड़ापूर्ण दुर्भिक्ष की बातें सुनाया करते थे, जिसके कारण भयभीत होकर रोमांचित हो जाता था। यह दुर्भिक्ष बाढ़ के पश्चात् किनारों का कूड़ा करकट ही सिद्ध हुआ। इतिहास के जानकार जानते है कि इंग्लैंड में बैठी विक्टोरिया रानी ने दुखी, पीड़ित, शोषित भारतीय जनता को शासन सुधार का एक तोहफा देकर आंसू पोंछने का कार्य किया, किंतु बार बार आंसू क्यों आते हैं इसके कारणों से अपना मुँह मोड़ लिया। सात समुन्द्र पार बैठी महारानी विक्टोरिया द्वारा गुलामों के साथ जो व्यवहार किया गया, वह माता के वात्सल्य, करूणा, त्याग और शान्ति के गुणों के बिल्कुल विपरीत था। विश्व में गुलाम जातियों के साथ ऐसा ही व्यवहार होता है।

ऐसे भीषण समय में स्वामी विरजानन्द की कुटिया के सम्मुख 34-35 वर्षीय हृष्ट-पुष्ट 6 फुट 2 इंच लम्बा गौर वर्ण चमकता हुआ ललाट धारण किए एक संयासी उपस्थित हो गया। यहां आने से पहले उक्त युवा संयासी मथुरा के रंगेश्वर महादेव मंदिर में आकर कुछ समय ठहरा था। इस युवा सन्यासी के वेश का चित्रण करते हुए प्रसिद्ध बंगाली लेखक बाबू देवेन्द्र नाथ मुखोपाध्याय अपने ग्रंथ में लिखते हैं- "उस सन्यासी की आयु लगभग 34 या 35 वर्ष की होगी, उसके वस्त्र गेरूए थे, कण्ठ में रूद्राक्ष की माला लहरा रही थी, हाथ में मात्र एक बड़ा सा लोटा या घड़ा था तथा साथ में कुछ पुस्तकें थीं। सन्यासी की आकृति में कुछ विशेषत्व है, उसकी बातचीत और भाव भंगिमा में कुछ असाधारणत्व का परिचय मिलता है। वह कुछ दिन के पश्चात दण्डी स्वामी विरजानन्द की पाठशाला में आ पहुँचा और उसने यथारीति प्रणिपात् के पश्चात् पढ़ने की इच्छा प्रकट की।

उपनिषद् में एक कथा आती है, जिसमें विद्या एक विद्वान ब्राह्मण से कहती है- मुझे किसी अपात्र को मत देना अन्यथा मेरा रूप कालिमामय हो जायेगा। स्वामी विरजानन्द जी अपनी पाठशाला में प्रवेश देते समय छात्र के पात्रापात्र का भलीभांति परीक्षण करते थे। प्रविष्ट छात्रों से वे न तो कोई शुल्क लेते थे और न समाप्ति पर कोई गुरू दक्षिणा।

हाँ, तो अपने नियम के अनुसार दण्डी स्वामी ने उपस्थित सन्यासी की मेघाबुद्धि की परीक्षा करने तथा 2-4 बातें करने के पश्चात् अनुभव कर लिया कि यह सन्यासी विद्यार्थी पूर्ण जिज्ञासु है तथा अनन्य असाधारण मेघावी है। कुछ क्षण रूककर स्वामी विरजानन्द ने कहा- 'अनार्ष ग्रंथों की बातें एकदम भूल जाओ। यदि इन अनार्ष ग्रंथों की शिक्षा की आशंका भी मन में रहेगी तो आर्ष ग्रंथों की शिक्षा बद्धमूल न हो सकेगी। अतः मनुष्य प्रणीत पुस्तकों के उपदेश को एकदम भूल जाओ और इतना ही नहीं तुम्हारे पास जो मनुष्य प्रणीत ग्रंथ है उन्हें इसी यमुना में फेंक आओ।' इस आदेश को सुनकर दयानन्द वहां से जाने लगे तब उस उत्कृष्ट सन्यासी ने इस दयानन्द से एक और बड़ी महत्वपूर्ण बात कह डाली। चूँकि तुम सन्यासी हो इससे प्रतीत होता है कि तुम्हारे भोजन और निवास के सम्बन्ध में कोई स्थिरता नही हो सकती, इसीलिए भोजन और आवास की व्यवस्था स्वयं आपको प्राथमिक रूप से करनी होगी। वह युवा सन्यासी भी कोई कम न था, वह तत्काल उन्हें आश्वासित कर वहां से चला गया। परंतु..... विरजानन्द पर अपनी छाप छोड़ गया।

यह निर्विवाद सत्य है कि परमात्मा नामक सत्ता पर दृढ़ आस्था रखने वाले सदैव आशावादी एवं उच्च मनोबल के होते हैं। सन्यासी दयानन्द तो इसके साक्षात अवतार थे। उन दिनों मथुरा में ज्योतिषी बाबा अथवा जोशी बाबा का घर सदाशयता और आतिथ्य के कारण बहुत प्रसिद्ध था। इस समय जोशी परिवार में 'अमरलाल' नामक महाशय विद्यमान थे। कहा जाता है कि उनके पूर्वज गुजरात से चलकर यहां आ गये थे। किसी ईश्वरीय प्रेरणा से ही इस युवा सन्यासी से महाशय अमरलाल का साक्षात्कार हो गया। अमरलाल जी भी औदिच्य ब्राह्मण थे। कुछ सौम्य और साम्य ने परिस्थिति को अनुकूल बना दिया। ब्राह्मणावृत्ति के कारण उस सन्यासी की ओर आकृष्ट हो गये। उस सन्यासी ने अपने मथुरा आने का मन्तव्य आदि सब कुछ बता दिया। तब पं. अमर लाल जी ने प्रसन्न मुद्रा में अपने ही घर पर नियमित रूप से भोजन का प्रबन्ध कर दिया। फिर भी समस्या आवास की शेष रह गई थी। मथुरा के विश्राम घाट के ऊपर वाले भाग में जो लक्ष्मी नारायण मंदिर है उसी के नीचे की मंजिल की कोठरी में इस सन्यासी के रहने की व्यवस्था हुई। देखें विरजानन्द चरित, लेखक स्व. देवेन्द्र नाथ मुखोपाध्याय, पृष्ठ 185। इस प्रकार रोटी, कपड़ा और मकान की व्यवस्था के बाद सन्यासी का ज्ञान यज्ञ प्रारम्भ हो गया।

कहते हैं गुरू विरजानन्द जी कभी कभी पढ़ाते समय दयानन्द दंडी सन्यासी से तर्क करते हुए बहुत गहराई तक चले जाया करते थे। स्वामी दयानन्द भी समझने लगे थे कि यह गुरूजी भी असाधारण प्रतिभा के हैं। उन्होंने सर्वप्रथम इन्हें पाणिनीय का पाठ पढ़ाना प्रारम्भ किया। वे बिना टीका भाष्यादि की सहायता से ही पढ़ाया करते थे। कहा जाता है कि विरजानन्द की वागिन्द्रय से भी नाना शास्त्रों की नाना व्याख्या अविरल रूप से निकलकर शिष्य मंडली को विस्मित करती थी। दयानन्द यह सब अद्भुत और अदृष्टपूर्ण व्यापार देखकर इस दृष्टिहीन अध्यापक को एक अलौकिक पुरूष स्वीकार करने पर बाध्य हुए और जितने विस्मयादिष्ट हुए उतने ही श्रद्धाभारावनत चित्त होकर उनसे पढ़ने लगे।

स्वामी विरजानन्द भाष्यों में से महाभाष्य पाणिनीकृत अष्टाध्यायी को सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ स्वीकार करते थे। यही कारण था कि दयानन्द को पाणिनी के साथ महाभाष्य को भी पढ़ाया जाने लगा। पढ़ाते समय कभी गुरू शिष्य में वाग्युद्ध भी हो जाता था। दयानन्द की तर्कपटुता देखकर ही विरजानन्द मन ही मन अति प्रसन्न होते थे। वे कभी दयानन्द को कालजिह्व कुलक्कर कहकर पुकारते थे। स्वामी विरजानन्द के शब्दों में - कालजिह्व उसे कहते है कि जिसकी जिह्वा असत्य खंडन में काल के समान हो। कुलक्कर उसे कहते हैं जो शास्त्रार्थ के समय खूंटे के समान अविचलित रहकर शत्रुपक्ष को परास्त करें।

स्व. श्री देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय के अनुसार- जैसे पुराकालीय समरशिक्षक या शास्त्राचार्यगण किसी मुनिपुत्र शिष्य को पाकर उसे रणभूमि में दुर्जेय बनाने के लिए ब्रह्मास्त्र के प्रयोग तक की शिक्षा दिया करते थे, इसी प्रकार उपस्थित क्षेत्र में भी जो कुछ सिंचित और संबल विरजानन्द के पास था, वह उस सबकी दयानन्द को शिक्षा देने लगे।

कहा जाता है कि स्वामी विरजानन्द के सानिध्य में दण्डी दयानन्द प्रायः तीन वर्ष ही रहे। कतिपय इतिहासकार इस समय को बढ़ाकर यह कहते है कि जब दयानन्द दीक्षा प्राप्त कर वहां से चले तब उनकी आयु 41 वर्ष की थी। दीक्षा के समय दयानन्द के पास कुछ न होने के कारण वे नतमस्तक होकर गुरूजी से बोले- 'मेरे पास कुछ नहीं है, मैं क्या देकर गुरू दक्षिणा का कार्य समाप्त करूँ।' तब विरजानन्द ने वात्सल्यपूर्ण शब्दों में अपने शिष्य से कहा- मैं तुमसे एक नये प्रकार की दक्षिणा चाहता हूँ। तुम मेरे सामने प्रतिज्ञा करो कि जब तक जीवित रहोगे तब तक भारत क्षेत्र में आर्ष ग्रंथों के प्रचार और वैदिक धर्म के विस्तार में प्राण-पण भी अर्पण कर दोगे। मैं इस प्रतिज्ञा परिपालन को ही तुमसे दक्षिणा रूप में ग्रहण करूँगा।' इसे सुनकर शिष्य बोला 'तथास्तु।' वहां से विदा होते समय विरजानन्द ने शिष्य के सिर पर हाथ रखकर आशीर्वाद दिया और विरजानन्द के वयोजीर्ण कंधों से वैदिक धर्म की पताका अपने बलिष्ठ कंधों पर लेकर मथुरा से प्रस्थित हो गए।

अ/15, सुदामानगर,
इन्दौर (म.प्र.)

hearyasamaj.org

नामकरण संस्कार स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती की देखरेख में हुआ-

1. आर्य समाज-सिमरौली- लोकेन्द्र सिंह की पुत्री का नाम प्रियंवदा रखा गया।
2. आर्य समाज-सेहल- मा. रामवीर सिंह जी के यहां पौत्र का नामकरण किया गया।
3. आर्य समाज-स्याना- शिवकुमार शास्त्री के पौत्री का नामकरण किया गया।
4. आर्य समाज-महमूदपुर- गुरूकुल ततारपुर के उपाध्यक्ष एवं आर्य समाज के प्रधान अमर सिंह आर्य के परिवार में लम्बी प्रतीक्षा के बाद पौत्र दर्शन हुए, उनका नामकरण संस्कार रणधीर कुमार शास्त्री मेरठ एवं स्वामी शिवानन्द जी परिव्राजक ने सम्पन्न कराया। आसपास के आर्यो ने उत्साहपूर्वक भाग लिया और बच्चे को आशीर्वाद दिया हमारी ओर से भी शुभाषीश।

यजुर्वेद पारायण यज्ञ-

1. आर्य समाज मीरपुर मेरठ में स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती के आशीर्वाद से यज्ञ एवं सम्मेलन सम्पन्न हुआ। आचार्य रवीन्द्र जी शास्त्री सम्पादक आर्ष ज्योति गुरूकुल पौन्धा देहरादून का पूरा परिवार प्रतिवर्ष यज्ञ के माध्यम से वेद प्रचार कराते हैं। भाई निरंजन सिंह आर्य एवं उनके साथी धन्यवाद के पात्र हैं। आर्य मित्र परिवार की ओर से बहुत बहुत शुभकामनायें।
2. आर्य समाज गवाँ, बदायूँ- आचार्य अरविन्द जी के निर्देशन में ब्र. श्रीराम आर्य एवं प्रमोद आचार्य ने वेदपाठ किया। पूर्णाहुति पर स्वामी धर्मेश्वरानन्द जी सभामंत्री ने जाकर आशीर्वाद प्रदान किया।
3. आर्य समाज भगवानपुर बांकर, मेरठ-का वार्षिक सम्मेलन 1, 2, व 3 अक्टूबर को सम्पन्न हुआ। स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती, यामाप्रकाश त्यागी क्षेत्रीय विधायक एवं नेताओं ने विचारों से लाभान्वित किया। श्रीमती सुलभा शास्त्री एवं शिवदत्त नादान, म. हरीशपाल आर्य के भजनों का प्रभाव रहा।
4. आर्य समाज खानपुर, मेरठ में शौदान सिंह आर्य के संयोजन एवं ओमवीर सिंह के घर पर वेद प्रचार सप्ताह कार्यक्रम हुआ। इसका समापन 3 अक्टूबर को हुआ। विद्वानों एवं सामाजिक कार्यकर्ताओं तथा खिलाड़ियों एवं मेघावी बच्चों को सम्मानित किया गया। विशेष भोजन का प्रसाद भी प्राप्त किया। यह कार्यक्रम पिछले 10 वर्षो से प्रतिवर्ष होता है।

स्मृति शान्ति यज्ञ

1. पिलखुवा 6 अक्टूबर सेठ राजेन्द्र प्रसाद आर्य जी की पुण्य तिथि पर उनके सुपुत्र अशोक कुमार आर्य ने यज्ञ सम्पन्न कराया तथा गुरूकुल पूठ एवं गुरूकुल तातारपुर के छात्रों को वस्त्र दान देकर सत्कृत किया।
2. छोटेलाल स्मारक हाईस्कूल राजा की सीकरी- बदायूँ में 2/10/14 को प्रातः श्री डा. जगदीश प्रसाद रस्तोगी का शान्ति यज्ञ श्री संजीव रूप ने सम्पन्न कराया। सभामंत्री स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती ने भी अपनी श्रद्धांजलि समर्पित की।
3. अशोक कुमार आर्य की सासु माता जी का शान्तियज्ञ बुलंदशहर में सम्पन्न हुआ।
4. महीपाल सिंह प्रधान की माता जी का संकराटीला गुरूकुल पूठ के निकट शान्तियज्ञ किया गया।
5. गुरूकुल पूठ के सहयोगी सदस्य दिनेश शर्मा की माता जी का शान्ति यज्ञ हुआ।
6. आर्य समाज डूँगराजाट के मंत्री झूलेसिंह की माता जी का शान्ति यज्ञ अरविन्द आचार्य ने कराया।
7. आर्य समाज बछलौता के मंत्री सुरेन्द्र सिंह एडवोकेट के पिता जी का शान्तियज्ञ प्रेमपाल शास्त्री ने कराया।
8. गुरूकुल तातारपुर के पूर्व प्रबंधक मात्र भीकमसिंह जी के सुपुत्र राजेन्द्र सिंह की अचानक हार्ट अटैक से मृत्यु हो गई आर्य समाज तातारपुर ने शान्तियज्ञ सम्पन्न करवाया।
9. आर्य समाज बहादुरगढ़ के मंत्री, जिलासभा के उपाध्यक्ष गुरूकुल पूठ के कोषाध्यक्ष महेश कुमार आर्य के दादा जी का शान्ति यज्ञ स्वामी धर्मेश्वरानन्द जी ने कराया।
10. आर्य समाज बहादुरगढ़ के उपमंत्री अशोक आर्य के दादा जी का शान्ति यज्ञ क्षेत्रीय अध्यक्ष अमर पाल सिंह आर्य ने सम्पन्न कराया।
11. बलबीर सिंह आर्य समाज श्रद्धापुरी मेरठ की माता जी का शान्तियज्ञ स्वामी विवेकानन्द सरस्वती गुरूकुल प्रभात आश्रम ने सम्पन्न कराया, सभामंत्री जी भी सम्मिलित रहे।
12. गुरूकुल पूठ के संरक्षक उड़ीया बाबा चतुर्भुज जी महाराज ब्रह्मलीन हो गए उनका शान्ति यज्ञ गुरूकुल की पवित्र यज्ञशाला में स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती के ब्रह्मत्व में सभी कुलवासियों ने सम्पन्न किया। आर्य मित्र परिवार एवं आर्य प्रतिनिधि सभा, उ.प्र. सभी के प्रति अपनी शोक संवेदना व्यक्त करती है।

महर्षि दयानन्द जीवन दर्शन प्रदर्शनी का समापन

कोटा, 22 अक्टूबर! राष्ट्रीय मेला दशहरा 2014 कोटा में वेद प्रचार समिति, कोटा तथा जिला आर्य प्रतिनिधि सभा कोटा के संयुक्त तत्वावधान में लगाई गयी वैदिक दर्शन प्रदर्शनी का समारोह पूर्वक हुआ समापन।

वैदिक दर्शन एवं सिद्धांतों से लोगों को अवगत कराने के उद्देश्य से विजयादशमी से कोटा के प्रसिद्ध दशहरे मेले में लगाई गई प्रदर्शनी का दिनांक 20 अक्टूबर को समापन हुआ।

समापन समारोह में जिला आर्य प्रतिनिधि सभा कोटा के प्रधान अर्जुनदेव चड्ढा ने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि मेले जैसे बड़े आयोजन में इस प्रकार की प्रदर्शनी से अधिक से अधिक लोग वैदिक सिद्धांतों से परिचित होते हैं। उन्हें आर्य समाज एवं महर्षि दयानन्द के बारे में जानने को मिलता है। यह बहुत प्रशंसनीय कार्य हैं।

कार्यक्रम का संचालन प्रभु सिंह कुशवाह ने किया। राम प्रसाद याज्ञिक ने आगंतुक अतिथियों का धन्यवाद ज्ञापित किया।

महर्षि दयानन्द जीवन दर्शन प्रदर्शनी को मिला प्रथम पुरस्कार-

नगर निगम कोटा के तत्वावधान में चल रहे राष्ट्रीय मेला दशहरा कोटा-2014 के धार्मिक प्रदर्शनी वर्ग में उत्कृष्ट कार्य करने के लिए आर्य समाज कोटा की महर्षि दयानन्द जीवन दर्शन एवं वैदिक साहित्य प्रदर्शनी को प्रथम पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

राष्ट्रीय मेला दशहरा के समापन समारोह के अवसर पर आयोजित भव्य कार्यक्रम में श्रीमती रत्ना जैन महापौर नगर निगम कोटा, राकेश सोरल उप महापौर आनन्द पाटनी, मेला संयोजक, मुख्य अतिथि प्रेम प्रकाश आयकर आयुक्त, विशिष्ट अतिथि पुरूषोत्तम त्रिपुरी आयकर आयुक्त अपील तथा उपस्थित अतिथियों ने आर्य समाज की प्रदर्शनी को प्रशस्ति पत्र एवं स्मृति चिन्ह प्रदान किया।

श्री कृष्ण साधक को दी गई श्रद्धांजलि

व्यक्ति को उसके किए गए सत्कर्मो से सदैव याद रखा जाता है। ऐसे व्यक्ति दूसरों के लिए प्रेरणास्त्रोत होते है, जो दूसरों के लिए अपना जीवन समर्पित कर दें। उक्त विचार आर्य समाज कोटा के जिला प्रधान अर्जुनदेव चड्ढा ने आर्य नेता व आर्य विद्वान श्री कृष्ण साधक की स्मृति में आयोजित यज्ञ कार्यक्रम में व्यक्त किए।

श्री चड्ढा ने कहा कि श्रीकृष्ण साधक ने अपना पूरा जीवन आर्य समाज की वैदिक विचारधारा के प्रचार प्रसार के लिए लगाया और कोटा के आसपास ग्रामीण क्षेत्र में आर्य समाजों की स्थापना की।

आज तलवंडी स्थित ओ3म हॉस्पिटल में साधक जी की स्मृति में आयोजित देवयज्ञ आर्य विद्वान पं. बिरधीचंद शास्त्री के पौरोहित्य में तथा डा. वेद प्रकाश गुप्ता एवं श्रीमती डा. सरोज गुप्ता के मुख्य यजमानत्व व डा. सौरभ गुप्ता एवं श्रीमती डा. नीतू गुप्ता तथा डॉ. मनीष गर्ग एवं डा. विनीता गर्ग के यजमानत्व में सम्पन्न हुआ।

thearyasamaj.org

आर्य मित्र
नारायण स्वामी भवन, ५-मीराबाई मार्ग, लखनऊ दूर./फैक्स:०५२२-२२८६३२८
प्रधान-०९४१२६७८५७१, मंत्री-०९८३७४०२१६२, सम्पादक-९५३२७४६६००
ई.मेल-apsabhaup86@gmail.com

स्वास्थ्य चर्चा -

स्वास्थ्य रक्षक: पपीता

पपीता आज से लगभग पांच सौ वर्ष पूर्व भारत आया, परंतु आज देशभर में पपीता उगाया जाता है। गाँवों में घरों के आस पास पपीते का पौधा लगाया जाता है, इसकी जड़े गहरी नहीं होती। पपीता की उपज साल में दो बार होती है। पपीता उदर रोगों में बड़ा लाभकारी पाया गया है। विटामिन ए, बी, सी, डी से युक्त एक अच्छा एंटी आक्सीडेंट होने के कारण यह अनेक रोगों से बचाता है। पपीता त्वचा तथा बालों के लिए भी बड़ा उपयोगी होता है। पेपैन नामक एंजाइम भोजन के पचाने के कार्य में प्रभावी होता है। अपच, प्लेग, कब्ज, यकृत आदि रोगों में अधिक लाभकारी होता है। पपीता के पत्तों का रस कैंसररोधी होता है। डेंगू इत्यादि रोगों में प्लेटलेट्स घटने पर पपीता के पत्तों का रस देने से शीघ्र प्लेटलेट्स चमत्कारी ढंग से बढ़ने लगते हैं।

आयुर्वेदिक गुण-दोष- पपीता एक उत्तम कब्ज निवारक फल है। प्रातः 250 ग्राम पका पपीता तथा भोजन के बाद 150 ग्राम पपीता का नित्य सेवन करना चाहिए।

भूख की कमी एवं अपच में- पके हुए पपीते को छीलकर काट लें तथा नींबू का रस निचोंड कर चुटकीभर सेंधा नमक एवं भुने हुए जीरे को पीसकर थोड़ा सा जीरा पाउडर डालकर पपीते का सेवन करेंगे तो पाचन ठीक तरह से होगा तथा जठराग्नि भी तेज होगी। भूख खुलकर लगेगी व पाचन शक्ति भी बढ़ेगी।

आंव में- पपीता कब्ज को दूर कर आँव को नष्ट करता है। आँव के मरीज को सदैव ही तले हुए खाद्य पदार्थो तथा मिर्च मसालों से परहेज रखना चाहिए तथा नियमित पपीते का सेवन करना चाहिए। भोजन के तुरन्त बाद छाछ पीना चाहिए। छाछ में भुना हुआ जीरा एवं सेंधा नमक या काला नमक भी स्वाद के अनुसार मिला लें।

दंत व्याधियों में- दांत वं मसूड़ों की तकलीफों से बचने के लिए पीपता का सेवन करना चाहिए। इससे दांतों का दर्द एवं मसूड़ों से खून आना तथा सूजन इत्यादि से छुटकारा मिलता है।

नेत्रों के लिए- नित्य पपीते का सेवन करने से नेत्र ज्योति अच्छी बनी रहती है।

प्लेग होने पर- प्लेग का आक्रमण होने पर पपीते का सेवन करने से 24 घंटे के अन्दर संधियों का दर्द दूर होता है। तथा इसमें प्लेग की गाँठ को नरम कर देने की अद्‌भुत क्षमता होती है।

पपीता के 125 मिली. ग्राम बीज को पानी में पीसकर हर दो-दो घंटे में पिलाने से वमन-विरेचन द्वारा शरीर का सारा विष नष्ट हो जाता है। रोगी को लाभ मिलता है।

हैजा में- पपीता के बीज 250 मिलीग्राम गुलाबजल के साथ घिसकर पिलाने से लाभ होता है। दिन में 3 बार दें।

अतिशार में- आधी रत्ती मात्रा में पीपते के बीज पानी के साथ घिसकर पिलाने से अतिसार में लाभ होता है।

विषैले जंतुओं के दश पर- विषनाशक प्रभाव होने पर पपीते के बीज को घिसकर दंशस्थल पर लेप करने से लाभ होता है।

गांठ पर- शरीर पर किसी भी प्रकार की गांठ पर पपीते के बीजों को घिसकर नित्य लेप करने से लाभ मिलता है। कच्चे पपीते का रस 20 ग्राम नित्य सेवन करते रहने से भी गांठ समाप्त हो जाती है।

उदर शूल में- आँतों में दर्द होने पर आधी रत्ती पपीते के बीज घिसकर पानी के साथ पिलाने से दर्द दूर होता है।

सुन्नता एवं चर्म विकारों में- खुजली या शरीर के किसी अंग में सुन्नता होने पर तिल के तेल में पपीते के बीज पीसकर पकाकर छान लें तथा यह सिद्ध तेल रखें। इस तेल से प्रभावित अंगों की मालिश करने से लाभ होता है। कच्चे पपीते का दूध लगाने से दाद आदि चर्मरोग नष्ट होते हैं।

अस्थि क्षय पर- अस्थियों के क्षरण होने पर संधियों के दर्द, अस्थि विकृति आदि व्याधियां जन्म लेंती है। पपीता का नियमित सेवन अस्थियों को मजबूत बनाता है। इसका नित्य सेवन करने से संधियों की विकृति दूर होती है।

सर्दी, जुकाम में-जिन्हें बार बार सर्दी-जुकाम, एलर्जी जैसे रोग सताते हैं, उन्हें नित्यप्रति पपीते का सेवन करना चाहिए, इससे इम्युनिटी बढ़ती है, रोग नष्ट होते हैं।

अम्ल पित्त में- पीपते का फल सेवन करने से अम्ल पित्त दूर होता है। जठराग्नि प्रदीप्त करता है। खट्टी डकार आनी बन्द हो जाती है। यकृत एवं तिल्ली की वृद्धि भी मिटती है।

पेट के कृमि रोग में- पीपते की बीजों को 1 रत्ती की मात्रा में लेकर पीस लें, एक कप गरम पानी में घोलकर खाली पेट 8-10 दिनों तक सेवन करने से आंत्र कृमि नष्ट हो जाते हैं। कच्चे पपीते का रस भी 50 ग्राम नित्य खाली पेट सेवन करने से कृमि नष्ट हो जाते हैं।

यकृत की कमजोरी में- पीपते को लीवर टॉनिक कहा गया है। पीलिया इत्यादि यकृत के विकारों में पके हुए पपीते का नियमित सेवन करना चाहिए। पपीता यकृत विकारों को नष्ट कर यकृत की कार्य प्रणाली को ठीक करता है।

बौनापन में- बच्चों की लम्बाई बढ़ाने के लिए पपीते का नियमित सेवन करना चाहिए। इससे पोषक तत्वों की पूर्ति होती है।

हृदय रोग में- पेड़ में लगे कच्चे पपीते को चाकू से चीरा लगाने पर पपीते का दूध निकलता है। कच्चे पपीते का दूध 10-12 बूंद बताशे पर टपकाकर प्रातः सेवन करने से हृदय के लिए लाभप्रद होता है। कच्चे पपीते की खीर बनाकर सेवन करना चाहिए। पपीते के 50 ग्राम हरे पत्तों को पानी में उबालकर बनाए काढ़े में सौंफ, इलायची, काली मिर्च तथा काले नमक को पीसकर बनाया पाउडर 3 ग्राम मिलाकर रात को सोते समय सेवन करना चाहिए। उपरोक्त उपचार हृदय रोगों में लाभप्रद है।

कष्टार्त्तव में- जिन महिलाओं को अनियमित या कष्टप्रद मासिक धर्म होता हो उन्हें कच्चे पपीते का रस 100 ग्राम नियमित सेवन करना चाहिए।

कैंसर में- कच्चे पपीते को सलाद के रूप में सेवन करना तथा कच्चे पपीते को कसकर दही के साथ रायता का सेवन करना चाहिए।

मूत्र विकारों में- पेशाब में जलन, दर्द, संक्रमण, बहुमूत्र इत्यादि में पके पपीते का सेवन लाभकारी होता है।

चेहरे के सौंदर्य के लिए- कच्चे पपीते को काटकर उसका रस चेहरे की त्वचा पर रगड़ने से चेहरे के दाग, कालिमा, धब्बों, कील मुँहासों पर रस लगाने से लाभ होता है।

पके पीपते को मसलकर पेस्ट बनाकर चेहरे पर आधे घंटे तक लगाकर रखें तत्पश्चात स्वच्छ पानी से चेहरा धो लें तथा सूती कपड़े से पोंछकर चेहरे पर नारियल या तिल का तेल लगायें, यह प्रयोग नियमित करने से लाभ होता है।

डेंगू ज्वर में- डेंगू ज्वर में रक्त के प्लेटलेट्स घट जाते हैं। 20 ग्राम गिलोय के रस के साथ पपीते के ताजे पत्तों का 20 ग्राम रस निकाल कर दिन में 2 बार तीन-चार दिनों तक देने से प्लेटलेट्स तेजी से बढ़ने लगते हैं। गेंहूँ के ज्वारे का रस एवं ग्वारपाठे (एलोवेरा) का रस भी प्लेटलेट्स बढ़ाने के लिए उपयोगी एवं सहायक सिद्ध होता है।

पित्त की पथरी में- यह पित्ताशय की पथरी के लिए प्रभावी प्रयोग है। पपीते की ताजी जड़ खोदकर लाएं तथा गमले में गाड़ दें ताकि नित्य प्रयोग के लिए ताजी बनी रहें। अब प्रतिदिन 5 ग्राम पपीते की जड़ धोकर साफ कर लें, तत्पश्चात पानी के साथ पीसकर छान लें तथा एक कप पानी के साथ निराहार प्रातः सेवन करें। यह प्रयोग 21 दिन तक करें फिर जांच करा लें।

पथ्य के रूप में- मूली, गाजर, खीरा, संतरा, मौसमी का रस पीना लाभदायक होता है। नींबू का रस पानी के साथ खाली पेट पीना चाहिए।

सेवा में,

.....

.....

.....

मैं हिन्दुस्तान हूँ

गर्व से बोलो कहो मैं राष्ट्र की सन्तान हूँ
मैं कि हिन्दू राष्ट्रवादी हूँ, मैं हिन्दुस्तान हूँ
ढोंग तुष्टीकरण का मैं मित्र कर सकता नहीं
देश पर बलिदान हो सकता हूँ झुक सकता नहीं
चल पड़ा यह विजय रथ मेरा तो रूक सकता नही
सोचकर निर्भीकता से जो कहा सच ही कहा
झूठ था वक्तव्य मेरा कोई कह सकता नहीं
मैं तिरंगे की समूचे विश्व में पहचान हूँ
मैं कि हिंदू राष्ट्रवादी हूँ मैं हिन्दुस्तान हूँ
संस्कृति का सभ्यता का एक सम्वाहक हूँ मैं
मत समझना राजनीति में खड़ा नाहक हूँ मैं
मातृभूमि को समर्पित जैसा जिस लायक हूँ मैं
देशद्रोही के लिए मैं चक्र हूँ धनश्याम का
देशभक्तों की सुरक्षा के लिए नायक हूँ मैं
देशहित में महाराणा हूँ शिवा की आन हूँ
मैं कि हिन्दू राष्ट्रवादी हूँ मैं हिन्दुस्तान हूँ
छल कपट मुझको नहीं आता बहुत स्पष्ट हूँ
देश के उत्थान की बाधाएँ करता नष्ट हूँ
मैं न व्याभिचारी, न रिश्वतखोर हूँ ना भ्रष्ट हूँ
हर अनगर्ल बात का संज्ञान मैं लेता नहीं
जो छुपे गद्‌दार हैं, उनके लिए मैं कष्ट हूँ
भगत सिह अशफाक, बिस्मिल की तरह बलिदान हूँ
मैं कि हिन्दू राष्ट्रवादी हूँ मैं हिन्दूस्तान हूँ।
विश्व में गूंजेगा भारत घोष वन्दे मातरम्
साथ में मेरे कहेगा, जो भी वन्दे मातरम्।
उसे मैं सम्मान दूँगा सत्य वन्दे मातरम्
जिनकी निष्ठा मेरे भारत में नही है दोस्तो
उन्हें अनदेखा करूँगा नहीं वन्दे मातरम्
सोचता मैं देश भारत का सदा उत्थान हूँ
मैं कि हिन्दू राष्ट्रवादी हूँ मैं हिन्दुस्तान हूँ।

हितेश कुमार शर्मा
गणपति भवन, सिविल लाइन्स, बिजनौर

शोक समाचार

आर्य समाज बबराला जनपद सम्भल, उ.प्र. के प्रधान मोहनलाल आर्य का हृदयगति रूकने से आज दिनांक 01.10.2014 को निधन हो गया। इस हृदय विदारक घटना को सुनकर पूरे क्षेत्र के आर्यो में शोक की लहर छा गई। इनकी मृत्यु से आर्य समाज की अपूरणीय क्षति हुई है। इनका पूरा परिवार विशुद्ध आर्य परिवार है। समस्त जनपद की आर्य समाजों व जिला आर्य उप प्रतिनिधि सभा सम्भल अपनी शोक सम्वेदना व्यक्त करती है।

दयाशंकर आर्य
मंत्री
आर्य प्रतिनिधि सभा, सम्भल

स्वामी–आर्य प्रतिनिधि सभा, उत्तर प्रदेश सम्पादक–आचार्य वेदव्रत अवस्थी, मुद्रक प्रकाशक–श्री सियाराम वर्मा, भगवानदीन आर्य भाष्कर प्रेस, 5–मीराबाई मार्ग, लखनऊ के लिए अस्थायी रूप में शुभम् आफ्सेट प्रिंटर्स, कैसरबाग, लखनऊ से मुद्रित एवं प्रकाशित
लेखों में वर्णित भाषा या भाव से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है–सम्पूर्ण विवादों का न्याय क्षेत्र लखनऊ न्यायालय होगा।